: आदिगुरु परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज , फतेहगढ़ी (पूज्य लालाजी) का "जीवन चरित्र " -- (रामाश्रम प्रकाशन) से चयनित अंश

सिद्धान्त व शिक्षा

सत्संगियों के लिए महात्मा जी की शिक्षा वास्तव में प्रेम की शिक्षा थी . प्रत्येक से प्रेम करना और प्रत्येक को प्रेम की डोर से बांधे रखना , यह उनका तरीक़ा था . महात्मा जी का कथन था कि यदि शिष्य गुरु से प्रेम करता है , उनका सत्संग करता है और उनके आदेश का पालन करता है तो इसी से उसकी अध्यात्मिक पूर्णता (तकमील) हो जायेगी . विशेष व्यक्तिओं को महात्मा जी ने कोई शिक्षा नही दी . केवल इतना था कि वे सत्संग में आते रहें और उनका उद्धार हो जाए परंतु यह तरीक़ा केवल उत्तम अधिकारियों के लिए था . आम तौर पर जैसी शिष्य की पात्रता होती थी उसी के अनुसार उसे शिक्षा देते थे . किसी को सुरत शब्द की शिक्षा देते तो किसी को दिल के जाप (ज़िक्र खफ़ी) की और किसी को वज़ीफ़ा और किसी को कुछ कर्म बतला देते थे . परंतु अधिकतर गुरु से तबज्जोह लेने , सत्संग करने और दिल के जाप करने पर ज़ोर देते थे . अपनी शक़्ल का ध्यान करने को बहुत ही कम बताते थे . महात्मा जी हृदय चक्र (क़ल्ब के मुक़ाम) पर ॐ शब्द का जाप कराते थे . उनके सत्संग के प्रताप से और तबज्जोह से चक्र (लतीफे) जागृत हो जाते थे , उनमें अनहद शब्द सुनाई देने लगता था . ऐसा होने पर आदेश देते थे कि इन्हीं को सुनते रहो और इतना अभ्यास करो कि उठतें -बैठते , सोते -जागते यहां तक कि एक सैकिण्ड के सांठवे हिस्से तक भी इससे ग़ाफ़िल मत रहो .

महात्मा जी का कथन था कि फ़क़ीरी की तीन शर्तें हैं -- १.इल्लत , यानी उसे कोई शारीरिक व्याधि होनी चाहिये . २.क़िल्लत , यानी उसे रुपए की कमी होनी चाहिये . ३.ज़िल्लत , यानी लोग उसकी निँदा करें . इनसे अहँकार दबा रहता है और घमंड नहीं होता .

जिसने अपने मन को मार लिया वह दुनियाँ का बादशाह है . इससे कठिन काम दुनियाँ में कोई नहीं है . सदाचार पर वह बहुत ज़ोर देते थे . उनका कहना था कि जब तक सदाचार पूर्णतया ठीक नहीं हो जाता आत्मानुभव नहीं होता . ज़्यादा रियाज़त (अभ्यास) और बजायफ (वज़ीफ़ा पढ़ना) के पक्ष में बीच का रास्ता पसन्द करते थे . उनका कहना था कि दिल का अभ्यास सबसे ऊँचा है , इसका असर शरीर पर पड़ता है . दिल को क़ाबू में रखना और उसे तरतीब देते रहना वही असली अभ्यास है .

महात्मा जी का कथन था कि गुरु हर मनुष्य को करना चाहिये लेकिन गुरु बहुत देख -भाल कर करना चाहिये . एक बार गुरु धारण कर लेने पर अपने आप को पूरी तरह उसके आधीन कर देना चाहिये जिस तरह मुर्दा ज़िन्दे के हाथ में होता है .

नैमत (प्रभु की देन) का शुक्रिया यह है कि उसका उचित प्रयोग किया जाये और वह उचित प्रयोग यह है कि ऐसे कर्मों का त्याग करदो जिनसे प्रभु की देन में गिराबट आती हो और वह कर्म अपनाये जो इस नैमत को स्थायी बनाने में सहायक हों .

सत्संग ऐसे लोगों को अपनाना चाहिये जो वास्तव में पूर्ण सदाचर से अपना जीवन निर्वाह करते हों . ईश्वर प्रेम से उनका दिल सराबोर हो और दूसरों को प्रभावित कर सकते हों .

सांसारिक बाधाएँ परमार्थ में ईश्वर की तरफ़ से देन होती हैं . वे मुबारिक हैं . नहीं मालूम कौन -कौन से भेद उनमें छिपे रहते हैं . बहुत से आँतरिक अनुभव इन पर निर्भर होते हैं .

जिस व्यक्ति की जितनी विवेक शक्ति तीव्र है उतनी ही उसकी आत्मा स्वच्छ हैं .

स्वाध्याय की अपेक्षा महात्मा जी अभ्यास पर अधिक ज़ोर देते थे . कुछ दिन अभ्यास कराने के बाद उसी अभ्यास के विषय में या तो स्वयँ मौखिक बता दिया करते थे या किसी पुस्तक में से पढ़कर सुना देते थे . महात्मा जी का कथन था कि जब तक अभ्यास से मन शुद्ध न कर लिया जाये तब तक किताबों के पढ़ने से कोई अधिक लाभ नहीं होता बल्कि अधिकतर अभ्यासी रास्ते से दूर जा पड़ते हैं . उनको झूंठा अभिमान अपनी विद्या का हो जाता है .

अपने प्रेमी -जनों के लिए महात्मा जी का उपदेश था कि स्वामी (मख़दम) बनने से सदा बचना ,सेवक (ख़ादिम) बनकर दूसरों की सेवा करना . ऐसे वायदा कभी न करना कि इतने समय में अमुक अनुभव कराऊंगा . सदा निस्वार्थ सेवा करना . ये सब अहंकार की बातें हैं .

भोजन पेट भर मत करो . थोड़ी कमी रह जाए . इससे अभ्यास अच्छा बनता है . जो लोग धर्म की कमाई नहीं खाते उनका कश्फ़ (अनुभव) कभी सही नहीं होता .

☆☆☆☆☆☆☆☆☆